शिक्षकों की कलम से

हमारा प्रयास है कि इस कॉलम के माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षक अपने अनुभवों को साझा कर सकें। कुछ अनुभव प्रस्तुत हैं। इन पर अपनी राय दीजिए। साथ ही, गुज़ारिश है कि आप अपने अनुभवों को भी ज़रूर साझा करें।

1. अपनी ज़मीं से जुड़ी शिक्षा बनाम... . पियुष त्रिवेदी
2. मेरा रोज़नामचा - एक शिक्षक की... . मुकेश मालवीय
3. बाज़ार और बच्चों का सीखना... . रुबीना खान

चित्रः रंजीत बालमुचु

अपनी ज़मीं से जुड़ी शिक्षा बनाम पत्थरों की कहानी

पियुष त्रिवेदी

अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन ने हमारे समक्ष एक विचार रखा कि क्यों न जीवाश्मों के अध्ययन के लिए नर्मदा घाटी का भ्रमण किया जाए। और अचानक इस विचार को मूर्त रूप देने का वक्त आ गया। तय दिनांक को सुबह 6 बजे खरगोन से रवानगी पर सहमति भी बन गई। सोने से पूर्व यही विचार मन में कौंध रहे थे कि इन जीवाश्मों को खोजा कैसे जाएगा, हमें पता कैसे चलेगा कि कौन-सा पत्थर जीवाश्म है और कौन-सा नहीं। रात में हर घण्टे उठ-उठकर मोबाइल में समय देख रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि अलार्म ही न बजे और मैं यहीं रह जाऊँ। लेकिन तय समय पर फाउण्डेशन द्वारा संचालित हमारी अपनी टीएलसी (टीचर्स लर्निंग सेंटर) पहुँच गया। मिनी बस में बैठकर, और सदस्यों को इकट्ठा करते हुए हम कसरावद, मण्डलेश्वर, महेश्वर होते हुए बाकानेर पहुँचे। बाकानेर में एक

शासकीय शिक्षक विशाल वर्मा, जो कि जीवाश्म विज्ञानी भी हैं, से मिले। उन्होंने अपना पूरा जीवन इस अमूल्य सम्पदा को बचाने में लगा दिया है। साथ ही दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर प्रसाद जो कि अपने कुछ छात्रों के साथ नर्मदा घाटी के जीवाश्मों के अध्ययन के लिए आए थे, उनको भी लगभग दो घण्टे तक सुनने का मौका मिला।

जीवाश्म और नर्मदा घाटी का इतिहास

यह तो मुझे पता था कि जीवाश्म मृत जीवों के अवशेष होते हैं जो किन्हीं कारणों से ज़मीन में दब गए थे। ऑक्सीजन न मिलने के कारण उन जीवों के ऊतकों में भूमि के खनिज रिसकर उन्हें कठोर पत्थर में बदल देते हैं। विज्ञान की भाषा में इसे 'पाषाणीकरण' भी कहते हैं।

उन दोनों वैज्ञानिकों से मिलने के बाद पता चला कि हमारा इलाका कितना समृद्ध है, हम कितने खुशकिस्मत हैं। अगले ही पल थोड़ा रंज भी हुआ कि इस तरह के मुद्दे हमारे शैक्षिक वार्तालापों में शामिल ही नहीं हुए। जिस नर्मदा घाटी में हम निवास कर रहे हैं वहाँ पाए जाने वाले इन सब संसाधनों से हम अंजान हैं। नर्मदा घाटी में जीवाश्म पाए जाते हैं, यह हमें कभी अपनी स्कूली शिक्षा के दौरान पता ही नहीं चला। वैसे मैं प्राथमिक कक्षाओं में अध्यापन करता हूँ मगर एक शिक्षक होने के नाते मुझे अपने परिवेश की समझ होनी चाहिए जिसका मुझे कभी मौका ही नहीं मिला।

विशाल वर्मा जैसे शिक्षक का समर्पण और ज्ञान का स्तर देखकर मुझे अपनी ही बिरादरी के शिक्षक पर गर्व हुआ। हमारे आसपास के सरकारी स्कूलों में पदस्थ ऐसे शिक्षक भी हैं जो बहुत कुछ कर रहे हैं। विशाल वर्मा एक ऐसी ही मिसाल हैं।

नर्मदा घाटी में कभी समन्दर हिलोरे लेता था। लाखों साल पहले के जीवाश्म बताते हैं कि यहाँ पर समन्दर था। यह हमारी ऐसी राष्ट्रीय धरोहर है जिसका इतिहास करोड़ों वर्ष पुराना है। जीवाश्मों के आधार पर और उन दोनों वैज्ञानिकों के अनुसार विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी लगभग 172 करोड़ वर्ष पुरानी है और सतपुड़ा पर्वत श्रेणी लगभग 98 करोड़ वर्ष पुरानी है। इन दोनों के मध्य समुद्र था और यह नर्मदा कहीं बड़वाह क्षेत्र में समुद्र में मिलती थी। दोनों वैज्ञानिकों ने इन जीवाश्मों के एक-एक पहलू को इतने व्यवस्थित ढंग से हमारे सामने रखा कि यहाँ का इतिहास हमें ठीक-से समझ में आ गया। उन्होंने जीवाश्मों को खोजने के तरीके भी बताए।

जीवाश्म की खोज

इस इलाके में जीवाश्म ऊँचे पहाड़ों या बहुत अधिक गहराई में नहीं मिलेंगे। ये छोटे-छोटे टीलों या पहाड़ियों पर मिलते हैं। इन टीलों की बनावट भी आकर्षित करने वाली होती है जिनमें चट्टानों की अलग-अलग परतें स्पष्ट

दिखाई देती हैं। प्रत्येक परत एक काल को दर्शाती है। जैसे सबसे ऊपर की परत सबसे नई होगी, उसके बाद वाली पुरानी और नीचे जाने पर और पुरानी। जीवाश्म हमें उन्हीं चट्टानों में मिलेंगे जिसकी मिट्टी भुरभुरी होगी। इन्हीं टीलों से समुद्री सीप, शार्क के दाँत (क्योंकि शार्क का बाकी शरीर नरम हड्डी, जिसे कार्टिलेज कहा जाता है, का बना होता है) इत्यादि मिलते हैं। डायनासॉर के जीवाश्मित अण्डे भी इस इलाके से प्राप्त हुए हैं। यह भी पता चला कि नर्मदा घाटी के बाग वाले क्षेत्र में नेस्टिंग साइट्स भी हैं (वह स्थान जहाँ डायनासॉर अण्डे देते थे)। इसके अलावा गुजरात, महाराष्ट्र में भी नेस्टिंग साइट्स हैं, पर केवल धार ज़िले के बाग वाले इलाके में ही लगभग 50 से 60 नेस्टिंग साइट्स मिली हैं।

यहाँ से हम जीवाश्मों को ढूँढ़ने के लिए निकल पड़े। मन में ढेर सारे विचार आ रहे थे। असल में मैं अपने बचपन की गर्मी की छुट्टियाँ इसी क्षेत्र में बिताता आ रहा था। इन जीवाश्मों को मैं आज से पहले पत्थर ही मानता था। कुछ जीवाश्म जिन्हें मैंने बचपन में देखा है उनमें 'फारमिनीफर' प्रमुख हैं। यह एक छोटे गोल पत्थर पर सितारा मछली की आकृति जैसा कुछ उभार लिए होता है जो नर्मदा घाटी की सितापुरी नदी और उसके आसपास के क्षेत्रों में बहुतायत में मिलता है। मैं इसे देखकर आश्चर्यचकित था क्योंकि अब मैं इसे एक अलग नज़रिए से देख रहा था। यह एक जीवाश्म है! इस जीवाश्म का एक सामाजिक पहलू भी है। आसपास के लोग इसे गौर माता मानकर अपने पूजाघरों में रखते हैं। लोग कहते हैं

कि यह केवल इसी नदी के आसपास मिलते हैं। पाँच की संख्या में इनकी पूजा की जाती है इसलिए आम भाषा में इसे 'पाँचे' कहा जाता है। इस वजह से जीवाश्मों का पता पूछना भी आसान हो गया क्योंकि झट-से गाड़ी रोककर किसी से भी पूछ लेते कि भाई, पाँचे कहाँ मिलेंगे और बताई हुई दिशा की ओर बढ़ जाते।

इस नदी पर एक जगह रुककर हमने अवलोकन किया कि नदी किनारे जो काले पत्थर होते हैं उनमें बहुत सारे बारीक छेद मौजूद हैं। पत्थरों में ये छेद क्यों हुए? वैसे ये पत्थर आग्नेय चट्टानों का एक रूप हैं। बात चली तो एक साथी ने कहा कि यह ज्वालामुखी के लावा से तैयार हुई आग्नेय चट्टानें हैं जिनमें से कुछ गैसें निकली होंगी और ठण्डी हो जाने पर इस तरह के छिद्र बन गए होंगे। यह जवाब हज़म नहीं हुआ। अगले ही क्षण एक साथी को उन छेदो में से हरे रंग का एक छोटा कंकड़ जैसा मिला। और फिर से नए अनुमान की शुरुआत होने लगी!

जीवाश्म के बारे में अज्ञानता

आगे हम देवरा नामक गाँव पहुँचे। यहाँ एक प्राचीन मन्दिर है जिसमें शिवलिंग स्थापित है। एक बड़ा-सा त्रिशूल जिसमें लोहे का डमरू बना था। कहा जाता है कि यह मन्दिर बहुत पुराना है। जीवाश्म मिलने की उम्मीद यहाँ भी थी पर आसपास के घरों की दीवारों को ध्यान से देखा तो पाया कि जिन चट्टानों से हमें जीवाश्म प्राप्त हो सकते हैं, वे यहाँ के लोगों ने अपने घर की दीवारों में ईंट के स्थान पर इस्तेमाल किए हैं।

यहाँ से हम आगे बढ़ना चाह रहे थे। कुछ शिक्षक पीछे छूट गए इसलिए हम उनका इन्तज़ार कर रहे थे। तभी हमारे साथी ने आसपास नज़र दौड़ाई तो नाले के किनारे दो-तीन बड़ी-बड़ी चट्टानों के टुकड़ों पर उनकी निगाह पड़ी। पास जाकर देखने पर लगा कि वाह! जैकपॉट लग गया। दोनों चट्टानों पर ढेर सारी सीपों-सी आकृतियाँ दिखाई दे रही थीं। छूने पर खुरदुरी और उनमें दबे हुए खोल साफ तौर पर दिख रहे थे। सभी साथियों ने इसे निहारा और आगे बढ़ गए।

रास्ते में छोटे-से नाले के आसपास खजूर के पेड़ों से स्थानीय लोग ताड़ी निकाल रहे थे। चलते हुए हम बोरलाय क्षेत्र में पहुँचे जहाँ ढेर सारे छोटे-बड़े टीले दिखाई दिए, और यहीं से हमें

सबसे ज़्यादा जीवाश्म प्राप्त हुए। यहाँ हमें पेड़ों के जीवाश्म भी खूब मिले। स्थानीय लोगों ने जीवाश्मों से खेतों की मेड़ बना रखी है। पेड़ों के तनों के जीवाश्मों में वातरन्ध्र साफ तौर पर दिखाई दे रहे थे। वातरन्ध्र किसी पेड़ के तने में छोटे-छोटे छेद होते हैं जिनसे तना श्वसन करता है। कुछ छोटे-बड़े जीवाश्मों को हम इकट्ठा भी करते जा रहे थे।

दोपहर के सूरज ने हमें परेशान करने की पुरज़ोर कोशिश की मगर जिज्ञासा और उत्साह की छाया का आनन्द कुछ और ही था। हम काफी सारे जीवाश्म देख चुके थे, और कुछ इकट्ठे भी कर चुके थे, पर और पाने और खोजने की इच्छा थी जो खत्म होने का नाम ही नहीं ले रही थी। टीला-दर-टीला हम जीवाश्मों को खोजते हुए बढ़ते जा रहे थे और उनके रंग-रूप, बनावट, वज़न, उनके इतिहास और वहाँ की भूगर्भीय हलचलों की कल्पनाएँ हमारी चर्चा में शुमार थीं।

सुना है कि यह ज़मीन शासन द्वारा किसी सीमेंट कम्पनी को लीज़ पर दी गई है जिसके कारण आसपास के चार-पाँच गाँवों में बहुत आक्रोश है। कहा जा रहा है कि कम्पनी द्वारा आम लोगों में से किसी को रोज़गार भी नहीं दिया गया। और खेती की ज़मीन भी कब्ज़े में ले ली है।

जीवाश्मों की तस्करी

शाम होने को थी और लौटना भी था। मन में कसक थी कि काश दो-तीन दिन का आवासीय भ्रमण होता तो इन जीवाश्मों का और अधिक अध्ययन कर पाते। लौटते हुए पहाड़ी पर बनी परतों को देखने के लिए एक बार फिर से रुके। समय कम बचा था और इच्छाएँ ज़्यादा! गाड़ी पर सवार होकर फिर से मनावर की ओर चल दिए। लौटते समय मेरे मन में कुछ विचार एवं प्रश्न उठे जो स्थानीय लोगों की अनभिज्ञता और उसका फायदा उठाने वाले सम्पदा के लालची ठेकेदारों को लेकर थे।

स्थानीय लोगों से बातचीत करने पर पता चला कि कुछ लोग इस अमूल्य सम्पदा की तस्करी भी करते हैं। जो लोग इन जीवाश्मों से अनभिज्ञ हैं, वे सिर्फ 5, 10, 50 रुपयों में इन जीवाश्मों को तस्करों के हाथों में दे देते हैं और फिर तस्कर इन्हें देश-विदेशों में बेचकर मोटी-मोटी रकम पाते हैं।

लौटते समय आँखों में नींद तो थी पर इस शैक्षिक भ्रमण से कुछ पाने का सुकून भी था। खलघाट में भोजन करने के पश्चात् कब खरगोन पहुँचे, पता ही नहीं चला। अपने-अपने घरों की ओर प्रस्थान किया क्योंकि अगली सुबह इन्तज़ार कर रही थी।

पियुष त्रिवेदी: शासकीय प्राथमिक विद्यालय, बैडियांव, ज़िला खरगोन में सहायक अध्यापक हैं।

सभी फोटोः कालू राम शर्मा।